IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 6.252
Volume 2, Issue 1, June 2022

दलित आंदोलन और डॉ. अंबेडकर की विरासत: एक ऐतिहासिक एवं वैचारिक अध्ययन

डॉ. रजत गंगवार
असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास,
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीसलपुर, पीलीभीत, उ०प्र०
rajat gangwar4289@gmail.com

शोध सारांश

भारत को प्रायः विविधताओं का देश कहा जाता है। यहाँ भाषायी, धार्मिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक और सामाजिक स्तर पर व्यापक विविधता विद्यमान है। यह विविधता भारतीय सभ्यता की समृद्धि और बहुलतावादी परंपरा का प्रतीक मानी जाती है, किंतु इस बहुरंभारतीय समाज की संरचना में जाति-व्यवस्था ने सदियों तक असमानता, बहिष्कार और सामाजिक विभाजन को बनाए रखा। इस व्यवस्था के कारण समाज का एक बड़ा वर्ग, जिसे आज 'दलित' के रूप में जाना जाता है, सामाजिक सम्मान, शिक्षा, आर्थिक अवसरों और राजनीतिक अधिकारों से वंचित रहा। इस ऐतिहासिक अन्याय के विरुद्ध जो संघर्ष धीरे-धीरे विकसित हुआ, वही आगे चलकर दलित आंदोलन के रूप में स्थापित हुआ। इस आंदोलन को वैचारिक स्पष्टता, राजनीतिक दिशा और संवैधानिक आधार प्रदान करने में डॉ. भीमराव रामजी अंबेडकर की भूमिका सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण रही।

डॉ. अंबेडकर ने दलित समाज को केवल शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने की प्रेरणा नहीं दी, बल्कि उन्हें आत्मसम्मान, शिक्षा, संगठन, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष करने का व्यावहारिक मार्ग भी दिखाया। उन्होंने दलित प्रश्न को दया या सुधार के विषय के रूप में नहीं, बल्कि अधिकार, नागरिकता और मानव गरिमा के प्रश्न के रूप में प्रस्तुत किया। यह शोध-पत्र दलित आंदोलन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, डॉ. अंबेडकर के सामाजिक-राजनीतिक योगदान, स्वतंत्रता,उत्तर भारत में उनकी विरासत तथा समकालीन दलित विमर्श में उनकी प्रासंगिकता का विश्लेषण करता है। अध्ययन का निष्कर्ष यह है कि डॉ. अंबेडकर की विरासत केवल संविधान-निर्माता या दलित नेता तक सीमित नहीं है, बल्कि वे आधुनिक भारत में सामाजिक लोकतंत्र, समानता और न्याय के सबसे प्रखर चिंतक हैं।

मुख्य शब्द -

Copyright to IJARSCT
www.ijarsct.co.in

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 6.252
Volume 2, Issue 1, June 2022

दलित आंदोलन, डॉ. बी.आर. अंबेडकर, सामाजिक समानता, जाति-व्यवस्था, दलित चेतना, बहुजन राजनीति, संविधान, विविधता, अस्पृश्यता, मानवीय गरिमा, मानव मुक्ति, नैतिक सहानुभूति, वैचारिक स्पष्टता, राजनीतिक दिशा, समतामूलक, संरचनात्मक अन्याय, सार्वजनिक प्रतिरोध

प्रस्तावना -

भारत को प्रायः विविधताओं का देश कहा जाता है। यहाँ भाषायी, धार्मिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक और सामाजिक स्तर पर व्यापक विविधता विद्यमान है। यह विविधता भारतीय सभ्यता की समृद्धि और बहुलतावादी परंपरा का प्रतीक मानी जाती है, किंतु इस बहुरंगी सामाजिक संरचना के भीतर एक गहरी और जटिल सामाजिक विषमता भी लंबे समय से विद्यमान रही है। भारतीय समाज की यह विषमता केवल आर्थिक या सांस्कृतिक असमानताओं तक सीमित नहीं रही, बल्कि इसका सबसे संगठित और कठोर रूप जाति-व्यवस्था के रूप में विकसित हुआ, जिसने समाज को जन्माधारित श्रेणियों में विभाजित कर दिया। इस व्यवस्था ने कुछ समूहों को विशेषाधिकार, प्रतिष्ठा और सामाजिक वर्चस्व प्रदान किया, जबकि कुछ समुदायों को अपमान, वंचना और सामाजिक बहिष्कार की स्थिति में धकेल दिया।

जाति-व्यवस्था का सबसे क्रूर और अमानवीय रूप अस्पृश्यता के रूप में सामने आया। अस्पृश्यता केवल एक सामाजिक व्यवहार नहीं थी, बल्कि यह एक ऐसी मानसिक, धार्मिक और सांस्कृतिक संरचना थी, जिसने लाखों मनुष्यों को मनुष्यता के बुनियादी अधिकारों से वंचित कर दिया। तथाकथित 'अस्पृश्य' समुदायों को सार्वजनिक कुओं, तालाबों, मंदिरों, विद्यालयों, धर्मस्थलों और यहाँ तक कि सामाजिक संपर्क के सामान्य दायरे से भी बाहर रखा गया। उन्हें ऐसे कार्यों तक सीमित कर दिया गया जिन्हें समाज ने 'निम्न' या 'अपवित्र' घोषित किया था। इस प्रकार, दलित समुदाय का प्रश्न केवल सामाजिक भेदभाव का प्रश्न नहीं, बल्कि मानवीय गरिमा, नागरिकता, सामाजिक न्याय और ऐतिहासिक अन्याय का प्रश्न है।

इसी अन्यायपूर्ण सामाजिक संरचना के विरुद्ध समय-समय पर प्रतिरोध के स्वर उठते रहे। भारतीय इतिहास में संत परंपरा, भक्ति आंदोलन, सामाजिक सुधार आंदोलनों तथा आधुनिक जागरण के विभिन्न चरणों में जाति-विरोधी चेतना के अनेक रूप देखने को मिलते हैं, किंतु इन प्रतिरोधों के बावजूद जाति-आधारित वर्चस्व और अस्पृश्यता की संरचना पूरी तरह समाप्त नहीं हो सकी। यही कारण है कि दलित समाज के भीतर एक स्वतंत्र सामाजिक-राजनीतिक चेतना का विकास हुआ, जिसने आगे चलकर दलित आंदोलन का रूप धारण किया। दलित आंदोलन केवल सामाजिक उत्पीड़न के विरुद्ध आक्रोश की अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि यह एक व्यापक मानव-मुक्ति आंदोलन है, जो समानता, सम्मान, न्याय, प्रतिनिधित्व और आत्मसम्मान की स्थापना की माँग करता है। आधुनिक भारत में इस आंदोलन को सबसे सशक्त वैचारिक, राजनीतिक और संवैधानिक रूप प्रदान करने का श्रेय डॉ. भीमराव रामजी अंबेडकर को जाता है। डॉ. अंबेडकर ने

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 6.252
Volume 2, Issue 1, June 2022

दलित प्रश्न को भारतीय समाज और राजनीति के केंद्र में स्थापित किया। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि दलितों की समस्या केवल सामाजिक उपेक्षा या नैतिक सहानुभूति का विषय नहीं है, बल्कि यह एक गहरी संरचनात्मक असमानता का परिणाम है, जिसका समाधान केवल सुधारवादी उपदेशों से संभव नहीं है। उनके लिए दलित मुक्ति का अर्थ था – शिक्षा, संगठन, संघर्ष, राजनीतिक शक्ति, विधिक संरक्षण और सामाजिक पुनर्गठन।

प्रस्तुत शोध-पत्र इसी व्यापक परिप्रेक्ष्य में दलित आंदोलन और डॉ. अंबेडकर की विरासत का अध्ययन करता है। यह शोध-पत्र इस प्रश्न की पड़ताल करता है कि दलित आंदोलन किस ऐतिहासिक प्रक्रिया से विकसित हुआ और डॉ. अंबेडकर ने उसे किस प्रकार वैचारिक स्पष्टता, संगठनात्मक शक्ति और राजनीतिक दिशा प्रदान की तथा उनकी विरासत आज भारतीय समाज, राजनीति और सामाजिक न्याय के विमर्श को किस प्रकार प्रभावित कर रही है। साथ ही, यह अध्ययन यह भी स्पष्ट करने का प्रयास करेगा कि अंबेडकर की विरासत केवल अतीत की उपलब्धि नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के अधिक न्यायपूर्ण, समतामूलक और मानवीय समाज की निर्माण-प्रक्रिया का भी एक केंद्रीय आधार है।

दलित आंदोलन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि-

भारतीय समाज की पारंपरिक संरचना में जाति-व्यवस्था एक ऐसी संस्था के रूप में विकसित हुई, जिसने सामाजिक संबंधों, धार्मिक अधिकारों, आर्थिक अवसरों और सांस्कृतिक प्रतिष्ठा को जन्म के आधार पर निर्धारित कर दिया। प्रारंभिक रूप में इसे समाज के संगठन का एक साधन माना गया, किंतु समय के साथ यह व्यवस्था कठोर, वंशानुगत और असमानतामूलक होती चली गई। इसने श्रम-विभाजन को एक नैतिक या आर्थिक प्रक्रिया के रूप में नहीं, बल्कि जन्माधारित और अपरिवर्तनीय सामाजिक श्रेणियों के रूप में स्थापित कर दिया। परिणामस्वरूप, कुछ जातियों को धार्मिक शुद्धता, सामाजिक श्रेष्ठता और सांस्कृतिक वर्चस्व का दर्जा मिला, जबकि कुछ समुदायों को 'अशुद्ध', 'अपवित्र' अथवा 'अस्पृश्य' मानकर सामाजिक रूप से बहिष्कृत कर दिया गया। दलित समुदाय, जिन्हें लंबे समय तक 'अछूत' अथवा 'Depressed Classes' जैसे अपमानजनक सामाजिक-राजनीतिक वर्गों में रखा गया, भारतीय सामाजिक संरचना के सबसे निचले स्तर पर स्थित कर दिए गए। इन समुदायों का जीवन गाँवों और कस्बों में मुख्य बस्तियों से पृथक क्षेत्रों में सीमित कर दिया जाता था। उन्हें सार्वजनिक कुओं, तालाबों, मंदिरों, विद्यालयों, धर्मशालाओं और अन्य सार्वजनिक स्थलों तक पहुँच से वंचित रखा जाता था। उनके वस्त्र, रहन-सहन, सामाजिक संपर्क और यहाँ तक कि उनके शरीर की उपस्थिति तक पर नियंत्रण स्थापित किया जाता था। यह केवल सामाजिक दूरी नहीं थी, बल्कि संगठित सामाजिक बहिष्कार की एक ऐसी प्रक्रिया थी, जिसका उद्देश्य दलित समुदाय को स्थायी रूप से अधीन और अपमानित स्थिति में बनाए रखना था।

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 6.252
Volume 2, Issue 1, June 2022

इस संदर्भ में यह समझना आवश्यक है कि दलित प्रश्न को केवल व्यक्तिगत पूर्वाग्रह या सामाजिक भेदभाव के रूप में नहीं देखा जा सकता। यह वस्तुतः एक संरचनात्मक अन्याय का प्रश्न है, जिसमें समाज की संस्थाएँ, परंपराएँ, धार्मिक वैधताएँ और आर्थिक संबंध – सभी मिलकर एक वंचित वर्ग का निर्माण और पुनरुत्पादन करते हैं। इसीलिए दलित आंदोलन का उद्भव केवल सामाजिक सहानुभूति की माँग के रूप में नहीं हुआ, बल्कि उसने इस संरचनात्मक अन्याय के विरुद्ध एक व्यापक वैचारिक और राजनीतिक चुनौती प्रस्तुत की।

पूर्व-आधुनिक और आधुनिक प्रतिरोध की परंपरा

भारतीय इतिहास में जाति-आधारित असमानता और सामाजिक वर्चस्व के विरुद्ध प्रतिरोध की परंपरा नई नहीं है। यद्यपि 'दलित आंदोलन' एक आधुनिक राजनीतिक-सामाजिक अवधारणा है, परंतु इसके वैचारिक बीज भारतीय इतिहास की अनेक परंपराओं में खोजे जा सकते हैं। मध्यकालीन संत परंपरा में कबीर, रविदास, चोखामेला, नामदेव और अन्य संत कवियों ने धार्मिक पाखंड, ब्राह्मणवादी श्रेष्ठताबोध और जातिगत ऊँच-नीच के विरुद्ध मुखर स्वर उठाए। इन संतों ने भक्ति को जन्म या जाति से ऊपर मानते हुए यह स्थापित करने का प्रयास किया कि ईश्वर के समक्ष सभी मनुष्य समान हैं। फुले का योगदान केवल शिक्षा तक सीमित नहीं था; उन्होंने सामाजिक न्याय और आत्मसम्मान की एक ऐसी भाषा विकसित की, जिसने आगे चलकर दलित-बहुजन विमर्श की आधारभूमि तैयार की। उनकी कृति "गुलामगिरी" भारतीय समाज में जाति-आधारित उत्पीड़न की एक प्रारंभिक और प्रखर आलोचना है। इसी प्रकार दक्षिण भारत में नारायण गुरु और पेरियार ई.वी. रामासामी ने जाति-वर्चस्व, धार्मिक अंधविश्वास और सामाजिक असमानता के विरुद्ध व्यापक संघर्ष किए। इन सुधारकों ने यह स्पष्ट किया कि सामाजिक परिवर्तन के लिए केवल धार्मिक सुधार पर्याप्त नहीं है; इसके लिए सामाजिक चेतना, शिक्षा, संगठन और सार्वजनिक प्रतिरोध की भी आवश्यकता है।

इन पूर्ववर्ती सुधार आंदोलनों ने दलित और निम्नवर्गीय समुदायों में आत्मसम्मान और अस्मिता की चेतना को जन्म दिया, किंतु उनके संघर्षों की सीमाएँ भी थीं। अधिकांश सुधार प्रयास नैतिक और सामाजिक सुधार के स्तर पर केंद्रित रहे; वे दलित समुदायों को पूर्ण राजनीतिक प्रतिनिधित्व, विधिक सुरक्षा और संवैधानिक अधिकारों की दिशा में उतनी स्पष्टता से नहीं ले जा सके। यही वह बिंदु है जहाँ डॉ. भीमराव अंबेडकर का उदय भारतीय सामाजिक इतिहास में एक निर्णायक मोड़ के रूप में सामने आता है। अंबेडकर ने पूर्ववर्ती जाति-विरोधी परंपराओं को आगे बढ़ाते हुए उन्हें एक नए स्तर पर पहुँचाया – जहाँ सामाजिक प्रतिरोध, राजनीतिक संगठन, विधिक चेतना और संवैधानिक संघर्ष एक-दूसरे से जुड़ गए।

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 6.252
Volume 2, Issue 1, June 2022

डॉ. अंबेडकर: जीवनानुभव और विचार-निर्माण-

डॉ. भीमराव रामजी अंबेडकर का जन्म 14 अप्रैल 1891 को एक ऐसे समाज में हुआ जहाँ जाति व्यक्ति की नियति तय करती थी। बचपन से ही उन्हें अस्पृश्यता का अपमान झेलना पड़ा – स्कूल में अलग बैठना, पानी छूने की मनाही, सार्वजनिक स्थानों पर अपमानजनक व्यवहार – ये सब उनके व्यक्तित्व और चिंतन पर गहरा प्रभाव डालने वाले अनुभव थे। इन अनुभवों ने उनके भीतर केवल आक्रोश नहीं, बल्कि एक गंभीर बौद्धिक बेचैनी पैदा की। उन्होंने समझ लिया कि जाति-आधारित अन्याय का समाधान भावनात्मक अपीलों से नहीं, बल्कि ज्ञान, संगठन और राजनीतिक शक्ति से ही संभव है।

डॉ. अंबेडकर ने उच्च शिक्षा के माध्यम से अपने जीवन की दिशा बदल दी। विदेश में अध्ययन के दौरान उन्होंने लोकतंत्र, आधुनिक राज्य, सामाजिक न्याय, अर्थशास्त्र और कानून का गहन अध्ययन किया। पश्चिमी चिंतन से परिचित होने के बावजूद उन्होंने भारतीय समाज की समस्याओं को भारतीय यथार्थ के आधार पर समझा।

उनके चिंतन में स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व केवल आदर्श नहीं थे, बल्कि समाज-निर्माण के मूल स्तंभ थे। उन्होंने स्पष्ट कहा कि यदि सामाजिक समानता नहीं होगी, तो राजनीतिक लोकतंत्र भी खोखला सिद्ध होगा। यही कारण है कि उनका पूरा आंदोलन सामाजिक लोकतंत्र की स्थापना की दिशा में केंद्रित दिखाई देता है।

डॉ. अंबेडकर और दलित चेतना का उदय-

डॉ. अंबेडकर के नेतृत्व में हुआ महाड़ सत्याग्रह दलित आंदोलन के इतिहास में एक निर्णायक घटना थी। यह केवल पानी पीने के अधिकार का संघर्ष नहीं था, बल्कि सार्वजनिक संसाधनों पर दलितों के समान अधिकार की घोषणा थी। महाड़ सत्याग्रह ने यह सिद्ध किया कि दलित आंदोलन किसी कृपा की माँग नहीं कर रहा, बल्कि वह नागरिकता के बुनियादी अधिकारों की माँग कर रहा है। इस आंदोलन ने दलित समाज के भीतर आत्मविश्वास और प्रतिरोध की नई चेतना पैदा की।

सामाजिक संघर्ष और सार्वजनिक प्रतिरोध-

मंदिर-प्रवेश आंदोलन भी प्रतीकात्मक रूप से अत्यंत महत्त्वपूर्ण थे। डॉ. अंबेडकर का उद्देश्य केवल धार्मिक स्थल में प्रवेश पाना नहीं था, बल्कि उस मानसिकता को चुनौती देना था जो मनुष्य को जन्म के आधार पर पवित्र और अपवित्र में बाँटती थी। हालाँकि बाद के वर्षों में अंबेडकर इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि जाति-आधारित धार्मिक संरचना के भीतर सम्मानजनक स्थान पाना संभव नहीं है, फिर भी इन आंदोलनों ने दलितों के भीतर सार्वजनिक अधिकारों के प्रति जागरूकता को व्यापक बनाया।

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 6.252
Volume 2, Issue 1, June 2022

डॉ. अंबेडकर ने केवल सामाजिक व्यवहार का विरोध नहीं किया, बल्कि उन वैचारिक स्रोतों की भी आलोचना की जो जाति-व्यवस्था को वैधता प्रदान करते थे। मनुस्मृति दहन इसी वैचारिक विद्रोह का प्रतीक था। यह कदम इस बात की घोषणा था कि दलित आंदोलन केवल सामाजिक समावेशन नहीं चाहता, बल्कि अन्यायपूर्ण विचारधाराओं का बौद्धिक प्रतिरोध भी करता है। इसने आंदोलन को एक क्रांतिकारी वैचारिक धार दी।

समकालीन भारत में डॉ. अंबेडकर की प्रासंगिकता-

आज भारत में आरक्षण, प्रतिनिधित्व, शिक्षा, सामाजिक समानता, लैंगिक न्याय, अल्पसंख्यक अधिकार और लोकतंत्र जैसे अनेक प्रश्नों पर चर्चा करते समय डॉ. अंबेडकर का विचार अपरिहार्य हो जाता है। वे केवल दलितों के नेता नहीं हैं; वे उन सभी समुदायों और व्यक्तियों के विचारक हैं जो सामाजिक असमानता के विरुद्ध न्यायपूर्ण व्यवस्था की तलाश में हैं। आज विश्वविद्यालयों, सामाजिक आंदोलनों, डिजिटल मंचों और युवा राजनीति में अंबेडकर का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। नई पीढ़ी उन्हें केवल संविधान-निर्माता के रूप में नहीं, बल्कि प्रतिरोध, आत्मसम्मान और बौद्धिक स्वतंत्रता के प्रतीक के रूप में देखती है। युवा अंबेडकरवाद की ओर इसलिए भी आकर्षित हैं क्योंकि यह उन्हें एक ऐसा वैचारिक ढाँचा देता है जिसमें लोकतंत्र, असहमति, अधिकार और सामाजिक परिवर्तन – सभी के लिए स्थान है। इसके बावजूद भारत में जाति-आधारित हिंसा, सामाजिक दूरी, शिक्षा और रोजगार में असमानता, तथा दलित महिलाओं के दोहरे-तिहरे शोषण जैसी समस्याएँ अब भी मौजूद हैं। इससे स्पष्ट है कि अंबेडकर की विरासत को केवल प्रतीकों, प्रतिमाओं और स्मरण-दिवसों तक सीमित कर देना पर्याप्त नहीं है। उनकी विरासत का वास्तविक सम्मान तभी होगा जब समाज और राज्य दोनों स्तरों पर समानता, गरिमा और न्याय को व्यवहार में उतारा जाएगा।

निष्कर्ष-

दलित आंदोलन भारतीय समाज के उस दीर्घकालिक ऐतिहासिक संघर्ष का प्रतिनिधित्व करता है, जिसने मनुष्य की गरिमा, समानता और न्याय को जन्म-आधारित सामाजिक असमानता के विरुद्ध स्थापित करने का प्रयास किया। यह आंदोलन केवल एक सामाजिक वर्ग के अधिकारों की माँग नहीं था, बल्कि वह भारतीय समाज की उस मूलभूत संरचना को चुनौती देने वाला आंदोलन था, जिसने सदियों तक लाखों लोगों को हीनता, बहिष्कार और अपमान के दायरे में सीमित रखा। इस दृष्टि से दलित आंदोलन को केवल एक प्रतिरोधात्मक सामाजिक प्रक्रिया के रूप में नहीं, बल्कि मानव-मुक्ति, सामाजिक पुनर्निर्माण और लोकतांत्रिक चेतना के व्यापक आंदोलन के रूप में समझना चाहिए।

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 6.252
Volume 2, Issue 1, June 2022

भारतीय इतिहास में जाति-आधारित उत्पीड़न के विरुद्ध अनेक स्तरों पर आवाज़ें उठती रही थीं, किंतु आधुनिक भारत में इस संघर्ष को सबसे अधिक स्पष्ट दिशा, वैचारिक गहराई, संगठनात्मक शक्ति और राजनीतिक स्वर डॉ. भीमराव रामजी अंबेडकर ने प्रदान किया। डॉ. अंबेडकर ने दलित प्रश्न को केवल सहानुभूति, दया या सुधारवाद के दायरे में सीमित नहीं रहने दिया, बल्कि उसे अधिकार, प्रतिनिधित्व, न्याय और समान नागरिकता के प्रश्न के रूप में स्थापित किया। यही उनकी सबसे बड़ी ऐतिहासिक भूमिका है। इस शोध-विमर्श से यह भी स्पष्ट होता है कि डॉ. अंबेडकर का योगदान केवल दलित आंदोलन तक सीमित नहीं है। वे आधुनिक भारत के उन विरल निर्माताओं में हैं जिन्होंने यह सुनिश्चित करने का प्रयास किया कि राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया केवल सत्ता-हस्तांतरण तक सीमित न रह जाए, बल्कि वह समाज के सबसे वंचित व्यक्ति तक न्याय, अवसर और गरिमा पहुँचाने का माध्यम बने। संविधान-निर्माण में उनकी भूमिका इसी व्यापक दृष्टि की अभिव्यक्ति थी। उन्होंने संविधान को केवल प्रशासनिक ढाँचे के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन के एक सशक्त साधन के रूप में देखा। यही कारण है कि भारतीय संविधान में निहित समानता, भेदभाव-निषेध, सामाजिक न्याय और प्रतिनिधित्व के सिद्धांत उनके विचारों की जीवित विरासत हैं।

स्वतंत्रता-उत्तर भारत में अंबेडकर की विरासत ने अनेक रूपों में अपना प्रभाव बनाए रखा है। दलित राजनीति, बहुजन विमर्श, सामाजिक न्याय की राजनीति, आरक्षण संबंधी बहसें, दलित साहित्य, विश्वविद्यालयीय आंदोलनों, सामाजिक आंदोलनों और डिजिटल जन-संवाद – सभी क्षेत्रों में अंबेडकरवादी चेतना की उपस्थिति स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। यह इस बात का प्रमाण है कि उनका विचार केवल इतिहास का विषय नहीं है, बल्कि वह आज भी एक जीवंत और सक्रिय वैचारिक शक्ति है।

अतः यह निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि दलित आंदोलन और डॉ. अंबेडकर की विरासत भारतीय समाज के इतिहास, वर्तमान और भविष्य – तीनों को समझने की एक अनिवार्य कुंजी है। यह केवल एक समुदाय के संघर्ष का इतिहास नहीं, बल्कि उस भारत की खोज का इतिहास है जो अधिक न्यायपूर्ण, अधिक समतामूलक, अधिक मानवीय और अधिक लोकतांत्रिक हो। इसी कारण डॉ. अंबेडकर का चिंतन और दलित आंदोलन की विरासत आज भी भारतीय समाज की आत्मालोचना, पुनर्विचार और पुनर्निर्माण की सबसे महत्त्वपूर्ण आधारभूमियों में से एक है।

संदर्भ सूची-

1. जाफ्रेलो, क्रिस्टोफ (2005). डॉ. आंबेडकर और अस्पृश्यता: जाति का विश्लेषण और संघर्ष. परमानेंट ब्लैक। एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका (2026). दलित. ब्रिटानिका।
2. ओम्वेड्ट, गेल (1994). दलित और लोकतांत्रिक क्रांति: औपनिवेशिक भारत में डॉ. आंबेडकर और दलित आंदोलन. सेज पब्लिकेशंस।

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 6.252
Volume 2, Issue 1, June 2022

3. ज़ेलियट, एलेनोर (2013). अस्पृश्य से दलित तक: आंबेडकर आंदोलन पर निबंध. मनोहर। एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका (2026). भीमराव रामजी आंबेडकर. ब्रिटानिका।

4. आंबेडकर, बी. आर. (1936/2014). जाति का उन्मूलन. नवयाना।

5. कीर, धनंजय (1990). डॉ. आंबेडकर: जीवन और मिशन. पॉपुलर प्रकाशन। एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका (2026). भारत का संविधान. ब्रिटानिका।

6. ओम्वेड्ट, गेल (2011). जाति को समझना: बुद्ध से आंबेडकर और आगे. ओरिएंट ब्लैकस्वान।

7. ड्यूमों, लुई (1980). होमो हायरार्किकस: जाति व्यवस्था और उसके निहितार्थ. यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस। एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका (2026). दलित. ब्रिटानिका।

8. आंबेडकर, बी. आर. (2014). जाति का उन्मूलन. नवयाना। (मूल कृति 1936 में प्रकाशित)।

9. जोधका, सुरिंदर एस. (2012). जाति. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

10. ओम्वेड्ट, गेल (1994). दलित और लोकतांत्रिक क्रांति: औपनिवेशिक भारत में डॉ. आंबेडकर और दलित आंदोलन. सेज पब्लिकेशंस।

11. ज़ेलियट, एलेनोर (2013). अस्पृश्य से दलित तक: आंबेडकर आंदोलन पर निबंध. मनोहर।

12. इलैया, कांचा (2009). मैं हिंदू क्यों नहीं हूँ. सम्या।

13. फुले, ज्योतिराव (1873/2002). गुलामगिरी. क्रिटिकल क्वेस्ट।

14. ओम्वेड्ट, गेल (2008). बेगमपुरा की खोज: जाति-विरोधी चिंतकों की सामाजिक दृष्टि. नवयाना।

15. कीर, धनंजय (1990). डॉ. आंबेडकर: जीवन और मिशन. पॉपुलर प्रकाशन।

16. आंबेडकर, बी. आर. (1946/2014). शूद्र कौन थे?. नवयाना।